प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका (सेवा) क्र. 974/2005

याचिकाकर्ता मोटूराम

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

रिट याचिका (सेवा) क्र. 975/2005

याचिकाकर्ता राजकुमार

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

रिट याचिका (सेवा) क्र. 976/2005

याचिकाकर्ता भुवनेश्वर

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

रिट याचिका (सेवा) क्र. 977/2005

याचिकाकर्ता अशोक कुमार साहू

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

&

रिट याचिका (सेवा) क्र. 978/2005

याचिकाकर्ता रामगोविंद शुक्ला

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

निर्णय एवं आदेश हेतु दिनांक 04.04.2011 को सूचीबद्ध किया जाए।

सही/-

(सतीश के. अग्निहोत्री)

न्यायाधीश

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका (सेवा) क्र. 974/2005

याचिकाकर्ता मोटूराम

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

रिट याचिका (सेवा) क्र. 975/2005

याचिकाकर्ता राजकुमार

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

रिट याचिका (सेवा) क्र. 976/2005

याचिकाकर्ता भुवनेश्वर

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

रिट याचिका (सेवा) क्र. 977/2005

याचिकाकर्ता अशोक कुमार साहू

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

रिट याचिका (सेवा) क्र. 978/2005

याचिकाकर्ता रामगोविंद शुक्ला

-बनाम-

उत्तरवादीगण मध्यप्रदेश राज्य एवं अन्य

एसबी: माननीय श्री सतीश के. अग्निहोत्री, न्यायमूर्ति।

उपस्थित: श्री जितेंद्र पाली, अधिवक्ता वास्ते याचिकाकर्तागण।

श्री वाय.एस.ठाकुर, उप महाधिवक्ता वास्ते राज्य/उत्तरवादी क्र. 1 से 5।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(दिनांक 4 अप्रैल, 2011 को उद्घोषित)

1. वर्तमान याचिकाओं में निहित विवाद एक ही घटना से संबंधित है। अतः सभी प्रकरणों पर एक साथ विचार किया जा रहा है तथा इन्हें इस एक ही आदेश द्वारा निस्तारित किया जा रहा है।

2. याचिकाकर्तागण, अर्थात् मोतूराम, आरक्षक; राजकुमार, आरक्षक; भुवनेश्वर, प्रधान आरक्षक; अशोक कुमार साहू, प्रधान आरक्षक; तथा रामगोविंद शुक्ला, आरक्षक, थाना मांपुर के राजनांदगांव जिला में पदस्थ थे। एम.एस. गिल नगर

निरीक्षक के रूप में पदस्थ थे। सभी याचिकाकर्ताओं के विरुद्ध विभागीय जांच इस आधार पर प्रारंभ की गई कि वे दिनांक 22.09.1992 को बिना अनुमति अपने दायित्वों से अनुपस्थित रहे, जबकि थाना प्रभारी द्वारा उन्हें 17.00 बजे थाना में उपस्थित रहने के लिए मौखिक निर्देश दिया गया था, जिनका पालन नहीं किया गया। जांच संपन्न किया गया और दिनांक 30.09.1993 के आदेश द्वारा याचिकाकर्ताओं को सेवा से हटा दिया गया। याचिकाकर्ताओं द्वारा दिनांक 19.10.1993 को पुलिस उप-महानिरीक्षक के समक्ष विभागीय अपील प्रस्तुत की गई, जिसे दिनांक 13.12.1993 को अस्वीकृत कर दिया गया। इसके अतिरिक्त याचिकाकर्ताओं द्वारा पुलिस महानिदेशक के समक्ष द्वितीय अपील भी प्रस्तुत की गई, जिसे दिनांक 27.06.1994 को अस्वीकार कर दिया गया।

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. क्षुब्ध होकर, याचिकाकर्ताओं ने मध्य प्रदेश राज्य प्रशासनिक अधिकरण, जबलपुर के समक्ष मूल आवेदन प्रस्तुत किए, जिन्हें ओ.ए. क्रमांक 2065/1994, 2066/1994, 2067/1994, 2068/1994 एवं 2069/1994 के रूप में पंजीकृत किया गया। प्रकरण के समस्त तथ्यों पर विचार करने के पश्चात, उपर्युक्त सभी याचिकाएँ दिनांक 22.03.1997 के आदेश (अनुलग्नक डी/1) द्वारा निरस्त कर दी गईं। तथापि, याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर पुनर्विचार याचिका को स्वीकार कर ली गई तथा दिनांक 29.06.1999 के आदेश (अनुलग्नक डी/2) द्वारा मामलों को पुनः सुनवाई हेतु निर्देशित किया गया, वह

भी इस सीमित प्रश्न पर, कि क्या प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किए जाने से जाँच प्रक्रिया निष्फल हुई या नहीं, तथा क्या जाँच अधिकारी ने न्यायाधीश के साथ-साथ अभियोजक की भूमिका भी निभाई।

उपर्युक्त प्रश्न पर अधिकरण ने पुनर्विचार आवेदन को निम्नलिखित आधार पर स्वीकार किया:

> "11. ...हमारी यह राय है कि अधिकरण ने इस विषय में कोई निष्कर्ष नहीं दिया कि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किए जाने से जाँच प्रक्रिया निष्फल हुई या नहीं। अधिकरण ने इस संबंध में भी कोई निष्कर्ष नहीं दिया कि क्या जाँच अधिकारी ने न्यायाधीश तथा अभियोजक, दोनों की भूमिका निभाई।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. उपरोक्त सभी याचिकाएँ राज्य प्रशासनिक अधिकरण के विघटन के पश्चात इस न्यायालय में स्थानांतरित कर दी गई हैं तथा इन्हें वर्ष 2005 की रिट याचिका (एस) क्र. 974, 975, 976, 977 एवं 978 के रूप में पुनः क्रमांकित किया गया है। अतः जाँच के कार्यवाही में विकृति एवं अनियमितता के संबंध में याचिकाकर्ताओं की शिकायतों पर विचार किया जा चुका है और वे समाप्त मानी जाती हैं, क्योंकि अधिकरण ने पुनर्विलोकन याचिकाओं में उठाए गए एवं स्वीकार किए गए आधार को छोड़कर अन्य सभी आधारों पर याचिकाएँ खारिज कर दी थीं। पुनर्विलोकन में स्वीकार किया गया आधार यह था कि क्या जाँच में

पारित आदेश इस आधार पर निष्फल है कि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा नहीं की गई थी, तथा क्या जाँच अधिकारी ने न्यायाधीश एवं अभियोजक—दोनों की भूमिका निभाई।

5. याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि संपूर्ण जाँच कार्यवाही इस कारण से निष्फल है कि कोई प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी नियुक्त नहीं किया गया। याचिकाकर्ताओं ने दिनांक 19.01.1993 को (रिट याचिका (सेवा) क्र. 974/2005 के अनुलग्नक ए-5) प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति हेतु अनुरोध किया था, किंतु ऐसा नहीं किया गया। जाँच अधिकारी ने स्वयं प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की भूमिका ग्रहण कर ली। जाँच अधिकारी की भूमिका न्यायिककल्प प्रकृति की होती है, अतः जाँच अधिकारी विभाग/अनुशासनिक प्राधिकारी का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता। जाँच अधिकारी ने प्रारंभिक प्रतिवेदन पर भरोसा किया, जो कभी भी याचिकाकर्ताओं को उपलब्ध नहीं कराया गया था, और इस प्रकार यह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है। अतः अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा याचिकाकर्ताओं को सेवा से हटाने का दंड, जिसे अपीलीय प्राधिकारियों द्वारा भी पुष्टि प्रदान की गई है, अपास्त किए जाने योग्य है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

6. इसके विपरीत, राज्य/उत्तरवादी क्रमांक 1 से 5 की ओर से उपस्थित विद्वान उप महाधिवक्ता श्री वाई.एस.ठाकुर ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि उक्त याचिकाओं का निराकरण राज्य प्रशासनिक अधिकरण, जबलपुर द्वारा दिनांक 22.03.1997 के आदेश के माध्यम से गुण-दोष के आधार पर किया जा चुका था। तथापि, याचिकाकर्ताओं द्वारा दायर पनरविलोकन आवेदन के परिणामस्वरूप, इन याचिकाओं को पुनः इस प्रश्न पर सुनवाई हेतु निर्देशित किया गया कि क्या प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किए जाने से जांच कार्यवाही निष्फल होती है या नहीं तथा क्या जांच अधिकारी ने न्यायाधीश तथा अभियोजक दोनों की भूमिका निभाई। मध्य प्रदेश/छत्तीसगढ़ सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1966 (संक्षेप में 'नियम, 1966') के नियम 14(5)(**c**) के प्रावधानों के अंतर्गत प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति आज्ञापक नहीं है, क्योंकि नियम 14(14) यह भी उपबंधित करता है कि जांच प्राधिकारी साक्षी से ऐसे प्रश्न पूछ सकता है, जैसा वह उपयुक्त समझे। अतः **"**प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी**"** की नियुक्ति की आवश्यकता अनिवार्य नहीं है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि याचिकाकर्ताओं ने जांच प्राधिकारी की ओर से किसी प्रकार के पक्षपात का कोई आरोप नहीं लगाया है तथा न ही जांच के दौरान प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किए जाने पर कोई आपत्ति दर्ज की है। यहाँ तक कि दया याचिका में भी ऐसा कोई आधार नहीं लिया गया है। इस प्रकार, वर्तमान याचिकाएँ गुणागुण से रहित हैं और खारिज किए जाने योग्य हैं।

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

7. पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया तथा अभिलेखों और उनके साथ संलग्न दस्तावेजों का अवलोकन किया गया।

8. नियम 14 शास्ति अधिरोपण की प्रक्रिया का प्रावधान करता है। नियम 14 के सुसंगत प्रावधान इस प्रकार हैं:

14. शास्तियाँ अधिरोपित करने के लिए प्रक्रिया –

XXX XXX XXX

XXX XXX XXX

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(5)(क) प्रतिवाद का लिखित कथन प्राप्त होने पर, अनुशासिक प्राधिकारी स्वयं, आरोप-पदों में से ऐसे आरोप पदों की जो स्वीकार नहीं किये गये हों, जांच कर सकेगा या उपनियम (2) के अधीन उस प्रयोजन के लिये, जांचकर्ता प्राधिकारी की नियुक्ति कर सकेगा, यदि वह ऐसा करना आवश्यक समझे ; और जहा समस्त आरोप शासकीय सेवक द्वारा प्रतिपाद के अपने लिखित कथन में स्वीकार कर लिये गये हों, वहां अनुशासिक प्राधिकारी ऐसा साक्ष्य लेने के पश्चात् जैसा कि वह उचित समझे, प्रत्येक आरोप के सम्बन्ध में अपना निष्कर्ष अभिलिखित करेगा और नियम 15 में दी गयी रीति में कार्य करेगा.

(ख) यदि शासकीय सेवक द्वारा, प्रतिवाद का कोई भी लिखित कथन प्रस्तुत न किया जाय, तो अनुशासिक प्राधिकारी स्वयं आरोप पदों की जांच करेगा, या उपनियम (2) के अधीन उस प्रयोजन के लिये जांचकर्ता प्राधिकारी की नियुक्ति कर सकेगा यदि वह ऐसा करना आवश्यक समझे.

(ग) जहां अनुशासिक प्राधिकारी स्वयं किसी भी आरोप पद की जांच करे, या ऐसे आरोप की जांच करने के लिये किसी जांचकर्ता प्राधिकारी की नियुक्ति करे, तो वह आदेश द्वारा आरोप पदों के समर्थन में अपनी ओर से मामला, प्रस्तुत करने के लिये किसी शासकीय सेवक या विधि व्यवसायी को नियुक्त कर सकेगा जो कि "प्रस्तुतकर्ता पदाधिकारी" के नाम से जाना जाएगा।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(14) जांच करने के लिये नियत किए गए दिनांक को, वह मौखिक तथा दस्तावेजी साक्ष्य, जिसके कि द्वारा आरोप-पदों का सिद्ध किया जाना प्रस्तावित है, अनुशासिक प्राधिकारी द्वारा या उसकी ओर से पेश किया जाएगा. साक्षियों की पृच्छा प्रस्तुतकर्ता पदाधिकारी द्वारा या उसकी ओर से की जाएगी और शासकीय सेवक द्वारा या उसकी ओर से उनकी प्रतिपृच्छा की जा सकेगा. प्रस्तुतकर्ता पदाधिकारी साक्षियों की पुनः पृच्छा, ऐसे किन्हीं भी

बिन्दुओं पर जिन पर कि उनकी प्रतिपृच्छा की गयी हो, करने का हकदार होगा किन्तु जांचकर्ता प्राधिकारी की इजाजत के बिना किसी भी नवीन विषय पर पुनः पृच्छा करने का हकदार नहीं होगा. जांचकर्ता प्राधिकारी साक्षियों से ऐसे प्रश्न भी पूछ सकेगा जिन्हें कि वह उचित समझे।

(17) जांचकर्ता प्राधिकारी शासकीय सेवक द्वारा अपना मामला समाप्त कर देने पर उस शासकीय सेवक को उसके विरूद्ध साक्ष्य में प्रतीत होने वाली किन्हीं भी परिस्थितियों को स्पष्ट करने में समर्थ बनाने के प्रयोजन से साक्ष्य में उसके विरूद्ध प्रतीत होने वाली परिस्थितियों पर उससे साधारणतः प्रश्न कर सकेगा और उपर्युक्त रूप में साधारणतः प्रश्न तब करेगा जब कि शासकीय सेवक ने स्वयं पृच्छा न की हो.

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(19) जांचकर्ता प्राधिकारी साक्ष्य का पेश किया जाना पूर्ण हो जाने के पश्चात्, नियुक्त किए गए प्रस्तुतकर्ता पदाधिकारी की, यदि कोई हो, तथा शासकीय सेवक की सुनवाई कर सकेगा, या उन्हें अपने-अपने मामले का लिखित निचय (ब्रीफ) फाईल करने की, यदि वे ऐसा करना चाहें, अनुज्ञा देगा.

9. अभिव्यक्ति 'कर सकता है' यह शब्द यह उपधारणा उत्पन्न करता है कि संबंधित प्रावधान निर्देशात्मक है, परंतु यह उस प्रावधान के संदर्भ, विषय-वस्तु, उद्देश्य तथा उसके अनुपालन न किए जाने के परिणामों पर निर्भर करता है।

10. नियम 14 शास्ति अधिरोपित करने की प्रक्रिया हेतु प्रावधान करता है। नियम 14 का उद्देश्य यह है कि अपचारी कर्मचारी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों पर निष्कर्ष दर्ज करने से पूर्व उसे विधिसम्मत रूप से सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाए। इसी उद्देश्य से नियम 14 के उप-नियम (4) में यह प्रावधान किया गया है कि शासकीय सेवक को आरोप-पत्र, अपचार या दुराचार के आरोपों का विवरण तथा उन दस्तावेजों और गवाहों की सूची की प्रतिलिपि दी जाएगी जिनके आधार पर आरोप सिद्ध किए जाने प्रस्तावित हैं। अतः उद्देश्य पूर्णतः स्पष्ट है कि शासकीय कर्मचारी को समुचित लिखित उत्तर प्रस्तुत करने, अपने गवाहों का परीक्षण करने तथा अभियोजन पक्ष के सूचीबद्ध गवाहों की प्रतिपरीक्षण करने का पूरा अवसर दिया जाना चाहिए। नियम 14 के उप-नियम (5) के युगल (स) में 'प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी' की नियुक्ति का प्रावधान है। आरोप-पत्रों के समर्थन में मामला प्रस्तुत करने हेतु किसी शासकीय कर्मचारी या विधि व्यवसायी को प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी नियुक्त करने के लिए 'सकता है' शब्द का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार, प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी आरोप-पत्रों के समर्थन में मामला प्रस्तुत करता है। तथापि, नियम 14 के उप-नियम (6)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

में यह भी प्रावधान है कि अनुशासनिक प्राधिकारी स्वयं जांच प्राधिकारी के रूप में भी कार्य कर सकता है। नियम 14 के उप-नियम (8) में शासकीय कर्मचारी को अपने पक्ष में मामला प्रस्तुत करने हेतु किसी अन्य शासकीय कर्मचारी की सहायता लेने का अधिकार दिया गया है, किंतु वह इस उद्देश्य से किसी विधि व्यवसायी को तब तक संलग्न नहीं कर सकता जब तक कि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा नियुक्त प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी स्वयं विधि व्यवसायी न हो। नियम 14 के उप-नियम (14) में 'करेगा' शब्द का प्रयोग करते हुए यह प्रावधान किया गया है कि "प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी को उन बिंदुओं पर, जिन पर गवाहों की प्रतिपरीक्षण किया गया उनका पुनः-परीक्षण करने का अधिकार होगा, किंतु जांच प्राधिकारी की अनुमति के बिना किसी नए विषय पर नहीं।" जांच प्राधिकारी को यह अधिकार भी है कि वह गवाहों से ऐसे प्रश्न पूछ सके, जो वह उपयुक्त समझे। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की भूमिका अनिवार्य है। तथापि, जांच प्राधिकारी को भी गवाहों का परीक्षण एवं प्रतिपरीक्षण करने का अधिकार प्राप्त है। नियम 14 के उप-नियम (15) में जांच प्राधिकारी को अपने विवेकाधिकार से यह अनुमति दी गई है कि वह प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी को ऐसे साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति दे सकता है जो शासकीय सेवक को दी गई सूची में सम्मिलित न हों, अथवा स्वयं नया साक्ष्य बुला सकता है या किसी साक्ष्यों को पुनः बुलाकर उसका पुनः-परीक्षण कर सकता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

11. नियम 14 के उप-नियम (17) के अंतर्गत, यद्यपि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी द्वारा पुनः परीक्षण अथवा प्रतिपरीक्षण का कोई प्रावधान नहीं है, क्योंकि यह कार्य जांच प्राधिकारी द्वारा किया जाना है। नियम 14 के उप-नियम (19) में यह भी प्रावधान है कि साक्ष्य के प्रस्तुतीकर्ता की प्रक्रिया पूर्ण होने के पश्चात्, जांच प्राधिकारी, यदि कोई प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी नियुक्त किया गया हो, तो उसे सुन सकता है। अतः प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति का उद्देश्य एक निष्पक्ष, स्वतंत्र एवं पक्षपात-रहित जांच सुनिश्चित करना है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

12. अतः नियम 14 के प्रावधानों के सामान्य अवलोकन तथा उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि नियम 14 के उप-नियम (5)(ग) में प्रयुक्त शब्द 'कर सकता है' को 'करेगा' के रूप में अभिप्रेत किया जा सकता है तथा प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति अनिवार्य है। शासकीय कर्मचारी के कदाचार की जांच के संदर्भ, उद्देश्य और प्रयोजन पर सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक निर्णयों में विचार किया है और यह अभिनिर्धारित किया है है कि जांच प्राधिकारी एक न्यायिककल्प प्राधिकारी के रूप में कार्य करता है तथा एक स्वतंत्र न्यायनिर्णायक की स्थिति में होता है।

13. विधि की व्याख्या के सिद्धांतों पर प्रसिद्ध पुस्तक, 12वाँ संस्करण, 2010, विद्वान न्यायमूर्ति जी.पी. सिंह (पूर्व मुख्य न्यायाधीश, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय) द्वारा लिखित, में निम्नानुसार अवधारित किया गया है:

> "अक्सर उद्धृत किए जाने वाले एक कंडिकामें लॉर्ड कैंपबेल ने कहा: यह निर्धारित करने के लिए कोई सार्वभौमिक नियम नहीं बनाया जा सकता कि आज्ञापक अधिनियमिति को केवल निर्देशात्मक माना जाए या अवज्ञा की स्थिति में विवक्षित अकृति के साथ बाध्यकारी समझा जाए। न्यायालयों का कर्तव्य है कि वे विचाराधीन विधि की समग्र परिधि पर सावधानीपूर्वक ध्यान देकर विधानमंडल की वास्तविक मंशा का पता लगाएँ। जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनुमोदित किया गया है: 'किसी विधि के आज्ञापक या निर्देशात्मक होने का प्रश्न विधानमंडल की मंशा तथा उस भाषा पर निर्भर करता है जिसमें उस मंशा को अभिव्यक्त किया गया है। विधानमंडल का अर्थ और आशय ही नियंत्रक होता है, और इसे न केवल उपबंध की शब्दावली से, बल्कि उसकी प्रकृति, उसके उद्देश्य तथा उसे एक प्रकार या दूसरे प्रकार से व्याख्यायित करने से उत्पन्न होने वाले परिणामों पर विचार करके भी निर्धारित किया जाना

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

चाहिए।' (देखें: यूपी राज्य बनाम मनबोधन लाल श्रीवास्तव, एआईआर 1957 एससी 912, पृ. 918; यूपी राज्य बनाम बाबूराम उपाध्याय, एआईआर 1961 एससी 751, पृ. 765; मैसूर राज्य बनाम वी.के. कंगन, एआईआर 1975 एससी 2190, पृ. 2192; गोविंदलाल छगनलाल पटेल बनाम कृषि उपज बाजार समिति, एआईआर 1976 एससी 263, पृ. 267; गणेश प्रसाद साह केसरी बनाम लक्ष्मी नारायण, एआईआर 1985 एससी 964; बी.पी. खेमका प्रा. लिमिटेड बनाम बीरेंद्र कुमार भौमिक, एआईआर 1987 एससी 1010; एम.वी. में रुचि रखने वाले मालिक और पक्षकार "वली पेरो" बनाम फर्नांडिस लोपे, एआईआर 1989 एससी 2206, पृ. 2213; म.प्र राज्य बनाम प्रदीप कुमार, (2000) 7 एससीसी 372, पी.आर. 377; सरला गोयल बनाम किशन चंद, (2009) 7 एससीसी 658.)

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

14. **भिखराज जयपुरिया बनाम भारत संघ**[1] के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अनुसार अभिनिर्धारित किया:

[1] एआईआर 1962 एससी 113 (वि 49 सी 21)

"17. ... जहाँ कोई विधि यह अपेक्षा करती है कि कोई कार्य निर्धारित विधि या रूप में किया जाए, किंतु अनुपालन न होने के परिणाम का स्पष्ट उल्लेख नहीं करती, वहाँ यह प्रश्न कि वह उपबंध आज्ञापक (**mandatory**) है या निर्देशात्मक (**directory**), विधायिका की मंशा के आलोक में निर्धारित किया जाएगा, जो कि अधिनियम के उद्देश्य, प्रयोजन और क्षेत्र से प्रकट होती है। यदि अधिनियम अनिवार्य है, तो निर्धारित विधि या रूप में न किया गया कार्य किसी भी प्रभाव या वैधता का अधिकारी नहीं होगा; यदि वह निर्देशात्मक है, तो अनुपालन न करने पर शास्ति अधिरोपित किया जा सकता है, किंतु किया गया कार्य या कृत्य वैध माना जाएगा। जैसा कि मैक्सवेल ऑन इंटरप्रिटेशन ऑफ स्टैच्यूट्स, 10वाँ संस्करण, पृष्ठ 376 में कहा गया है:

'यह कहा गया है कि यह निर्धारित करने के लिए कोई सार्वभौमिक नियम नहीं बनाया जा सकता कि किसी आदेश को मात्र एक दिशा-निर्देश या निर्देश माना जाए, जिसकी अवहेलना से कोई अमान्यकारी परिणाम न उत्पन्न हो, अथवा उसे आज्ञापक माना जाए, जिसकी अवज्ञा पर

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

निहित शून्यता (**nullification**) का परिणाम हो। मूलभूत सिद्धांत यही है कि यह अधिनियम के क्षेत्र और उद्देश्य पर निर्भर करता है। सामान्यतः यह कहना सही हो सकता है कि अवज्ञा का स्वाभाविक और सामान्य परिणाम शून्यता होता है, किंतु मुख्यतः यह प्रश्न सुविधा और न्याय के विचारों द्वारा नियंत्रित होता है; और जब ऐसा परिणाम निर्दोष व्यक्तियों के लिए सामान्य असुविधा या अन्याय उत्पन्न करे, अथवा उपेक्षा के दोषी व्यक्तियों को लाभ पहुँचाए, बिना अधिनियम के वास्तविक उद्देश्य और प्रयोजन को आगे बढ़ाए, तब ऐसी मंशा को विधायिका के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए। विचाराधीन अधिनियम के संपूर्ण क्षेत्र और उद्देश्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए।'

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

लॉर्ड कैम्पबेल ने *लिवरपूल बरो बैंक बनाम टर्नर,* (1860) 30 एल.जे. चांसरी 379 में यह कहा:

'इस संबंध में कोई सार्वभौमिक नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता कि आज्ञापक उपबंधों को मात्र निर्देशात्मक माना जाए या उनकी अवज्ञा पर निहित शून्यता के साथ बाध्यकारी। न्यायालयों का कर्तव्य है कि वे व्याख्या किए

जाने वाले अधिनियम के संपूर्ण क्षेत्र पर सावधानीपूर्वक ध्यान देकर विधायिका की वास्तविक मंशा का पता लगाएँ।"

15. सर्वोच्च न्यायालय ने **रज़ा बुलंद शुगर कंपनी लिमिटेड, रामपुर *बनाम* नगरपालिका बोर्ड, रामपुर**[2] के मामले में निम्नलिखित अनुसार अभिनिर्धारित किया:

"7. यह प्रश्न कि किसी संविधि का कोई विशेष प्रावधान, जो प्रथम दृष्टया आज्ञापक प्रतीत होता है—क्योंकि उसमें वर्तमान मामले की तरह 'करेगा' शब्द का प्रयोग किया गया है—वास्तव में आज्ञापक है या केवल निर्देशात्मक, किसी सामान्य नियम को निर्धारित करके हल नहीं किया जा सकता। यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करता है और इस उद्देश्य के लिए उस प्रावधान को बनाने में विधायिका का उद्देश्य निर्णायक कारक होता है। जिस उद्देश्य के लिए प्रावधान बनाया गया है और उसकी प्रकृति, प्रावधान बनाने में विधायिका की मंशा, यदि प्रावधान को किसी एक प्रकार से या दूसरे प्रकार से पढ़ा जाए तो उससे व्यक्तियों को होने वाली गंभीर सामान्य असुविधा या अन्याय, उसी विषय

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

[2] एआईआर 1965 एससी 895 (वि 52 सी 141)

से संबंधित अन्य प्रावधानों के साथ उस विशेष प्रावधान का संबंध, तथा किसी विशेष मामले के तथ्यों के आधार पर उत्पन्न होने वाले अन्य विचार, जिनमें प्रावधान की भाषा भी सम्मिलित है—इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए यह निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि कोई विशेष प्रावधान आज्ञापक है या निर्देशात्मक।"

16. सर्वोच्च न्यायालय ने **केशव चन्द्र जोशी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य**[3] में निम्नलिखित रूप में निर्णय दिया:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"33....आयोग से परामर्श 'कर सकता है' (कर सकता है) शब्द का प्रयोग वैधानिक कर्तव्य के निर्वहन के संदर्भ में किया गया है। राज्यपाल पर लोक सेवा आयोग से परामर्श करने का दायित्व है। अतः 'कर सकता है' शब्द की व्याख्या 'करेगा' के रूप में की जानी चाहिए और नियमों के संचालन से छूट देने अथवा सेवा की शर्तों में शिथिलता प्रदान करने से पूर्व राज्यपाल के लिए लोक सेवा आयोग से परामर्श करना आज्ञापक है, ताकि किसी सदस्य को अनावश्यक

[3] 1992 सप्प (1) एससीसी 272

कठिनाई से राहत दी जा सके और न्यायसंगत एवं समतापूर्ण परिणाम सुनिश्चित किए जा सकें..."

17. याचिकाकर्ता द्वारा **रतन लाल शर्मा बनाम प्रबंध समिति, डॉ. हरि राम (सह-शिक्षा) उच्चतर माध्यमिक विद्यालय एवं अन्य**[4] का अवलंब किया गया है, प्रकरण के तथ्यों के लिए सुसंगत नहीं है, क्योंकि जाँच में अवैधता एवं विकृति के प्रश्न पर विवाद पहले ही निर्णीत हो चुका है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

18. **एन.नागेंद्र राव एंड कंपनी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य**[5] में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की—

"6. यद्यपि इस धारा में 'कर सकता है ' शब्द का प्रयोग किया गया है, तथापि अधिनियम के उद्देश्यों तथा जिस संदर्भ में इसका प्रयोग हुआ है, उसे ध्यान में रखते हुए इसे 'करेगा ' के रूप में पढ़ा जाना चाहिए, अन्यथा यह उप-धारा के उद्देश्य को निष्फल कर देगा।"

19. **दिनकर अन्ना पाटिल एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य**[6] में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया—

[4] (1993) 4 एससीसी 10
[5] (1994) 6 एससीसी 205
[6] (1999) 1 एससीसी 354

"26. नियम 4-क एक सर्वोपरि खंड से प्रारंभ होता है और यह प्रावधान करता है कि यदि राज्य सरकार की राय में सेवा की अत्यावश्यक परिस्थितियाँ ऐसा आवश्यक बनाती हैं, तो सरकार, जहाँ आवश्यक हो, मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग से परामर्श कर, नियम 4 में निर्धारित प्रतिशत में शिथिलता प्रदान करते हुए पदों पर पदोन्नति एवं नामांकन द्वारा नियुक्तियाँ कर सकती है। अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित कि इस नियम में प्रयुक्त 'कर सकता है' शब्द निर्देशात्मक है, किंतु हमारे सुविचारित मत में ऐसा अर्थ देने से, जहाँ आवश्यक हो, मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग से परामर्श करने का मूल उद्देश्य ही निष्प्रभावी हो जाएगा। इससे सरकार को एमपीएससी से परामर्श को त्यागने की असीमित शक्ति प्राप्त हो जाएगी, जिसके परिणामस्वरूप प्राधिकारी द्वारा शक्तियों का मनमाना प्रयोग हो सकता है। यह कभी भी नियम 4-क का उद्देश्य नहीं हो सकता। हमारे विचार में 'कर सकता है' शब्द का अर्थ 'करेगा' ही होना चाहिए और यह बात राज्य सरकार तथा मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग के बीच हुए पत्राचार से भी स्पष्ट है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

20. उद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25(ण) के अंतर्गत प्रयुक्त शब्द 'कर सकता है' की व्याख्या करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने **ओडिशा टेक्सटाइल एंड स्टील लिमिटेड बनाम ओडिशा राज्य एवं अन्य**[7] के प्रकरण में निम्नलिखित संप्रेक्षण कीया :

> **"14.** इसके अतिरिक्त, संशोधित धारा 25(ण) की उप-धारा (5) यह प्रावधान करती है कि उपयुक्त सरकार, स्वप्रेरणा से अथवा नियोक्ता या किसी भी कर्मकार द्वारा किए गए आवेदन पर, अनुमति प्रदान करने या अस्वीकार करने संबंधी अपने आदेश की पुनर्विलोकन कर सकती है अथवा मामले को निर्णय हेतु किसी अधिकरण को संदर्भित कर सकती है। यह भी प्रावधान किया गया है कि यदि इस उप-धारा के अंतर्गत किसी अधिकरण को संदर्भ किया जाता है, तो अधिकरण ऐसे संदर्भ की तिथि से 30 दिनों की अवधि के भीतर अपना अधिनिर्णय पारित करेगा। नियोक्ताओं की ओर से अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि पुनर्विलोकन करने या संदर्भ भेजने का विषय पूर्णतः उपयुक्त सरकार के विवेकाधिकार पर छोड़ दिया गया है, तथा नियोक्ता को पुनर्विलोकन या संदर्भ की अनिवार्य मांग करने का कोई

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

[7] (2002) 2 एससीसी 578

अधिकार नहीं है। माननीय महाधिवक्ता ने निष्पक्ष रूप से यह स्वीकार किया कि संशोधित धारा 25(ण) की उप-धारा (5) में प्रयुक्त शब्द 'कर सकता है' को 'करेगा' के रूप में पढ़ा जाना चाहिए। उन्होंने यह भी प्रस्तुत किया कि 'पुनर्विलोकन ' का तात्पर्य सभी सुसंगत तथ्यों की जाँच करना होगा, विशेष रूप से नियोक्ता द्वारा बताए गए कारणों की वास्तविकता एवं पर्याप्तता की जाँच, तथा संबंधित पक्षों को सुनवाई का अवसर प्रदान करना। उन्होंने यह भी कहा कि पुनर्विलोकन के उपरांत पारित किया गया आदेश लिखित रूप में होगा तथा उसमें कारणों का उल्लेख किया जाना अनिवार्य होगा। उन्होंने आगे यह तर्क दिया कि यद्यपि संशोधित धारा 25(ण) की उप-धारा (5) में पुनर्विलोकन के निस्तारण हेतु कोई समय-सीमा निर्धारित नहीं की गई है, तथापि धारा के समुचित एवं तार्किक पाठ से यह अनिवार्य रूप से निष्कर्ष निकलता है कि पुनर्विलोकन आवेदन की तिथि से 30 दिनों की अवधि के भीतर निस्तारित की जानी चाहिए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

16. हमारे विचार में, माननीय महाधिवक्ता का कथन सही है। संशोधित धारा 25-ओ की उप-धारा (5) का समुचित

पाठ यह स्पष्ट करता है कि जिस संदर्भ में शब्द 'कर सकता है' का प्रयोग किया गया है, उसमें इसका अर्थ अनिवार्य रूप से 'करेगा' है। अतः, यदि इस संबंध में नियोक्ता या कामगारों द्वारा आवेदन किया जाता है, तो उपयुक्त सरकार अनिवार्य रूप से उस आदेश की पुनर्विलोकन करेगी।"

21. **मणि शंकर बनाम भारत संघ एवं अन्य**[8] के मामले में, जिस पर याचिकाकर्ताओं ने अवलंब किया है, वहाँ विवाद का विषय विभागीय कार्यवाही के संचालन से संबंधित था। उक्त संदर्भ में माननीय न्यायालय द्वारा निम्नानुसार प्रतिपादित किया गया:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"17. विभागीय कार्यवाही एक न्यायिककल्प कार्यवाही होती है। यद्यपि ऐसी कार्यवाही में भारतीय साक्ष्य अधिनियम के प्रावधान लागू नहीं होते, तथापि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किया जाना अनिवार्य है। न्यायिक पुनरीक्षण की शक्ति का प्रयोग करने वाला न्यायालय यह विचार करने का अधिकारी है कि क्या किसी अपचारी कर्मचारी के विरुद्ध अपचार का निष्कर्ष निकालते समय सुसंगत साक्ष्यों पर

[8] (2008) 3 एससीसी 484

विचार किया गया है तथा असंगत तथ्यों को उससे पृथक रखा गया है। तथ्यों पर आधारित निष्कर्ष ऐसे साक्ष्यों पर आधारित होने चाहिए जो विधिक सिद्धांतों की आवश्यकताओं को पूरा करते हों। अतः अधिकरण इस आधार पर अपने स्वतंत्र निष्कर्ष पर पहुँचने का अधिकारी था कि विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य, भले ही उन्हें पूर्णतः सत्य मान लिया जाए, क्या वे प्रमाण के भार की आवश्यकताओं, अर्थात् संभावनाओं के प्राबल्य की कसौटी पर खरे उतरते हैं या नहीं। यदि ऐसे साक्ष्यों के आधार पर आनुपातिकता के सिद्धांत की परीक्षा संतोषजनक रूप से पूरी नहीं होती, तो अधिकरण को उसमें हस्तक्षेप करने का अधिकार था। हम यह अभिलेख पर रखना आवश्यक समझते हैं कि अब 'अयुक्तियुक्तता के सिद्धांत' (**Doctrine of Unreasonableness**) का स्थान धीरे-धीरे 'आनुपातिकता के सिद्धांत' द्वारा लिया जा रहा है। (देखें— **यूपी राज्य श्यो शंकर लाल श्रीवास्तव** तथा **कोयंबटूर जिला केंद्रीय सहकारी बैंक बनाम कोयंबटूर जिला केंद्रीय सहकारी बैंक कर्मचारी संघ**)."

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

22. **राज्य उत्तराखंड एवं अन्य बनाम खरक सिंह**[9], जिस पर याचिकाकर्ताओं द्वारा अवलंब किया गया है, वर्तमान प्रकरण के तथ्यों पर लागू नहीं होता। उक्त प्रकरण में यह प्रश्न विचाराधीन था कि क्या जाँच अधिकारी ने अपनी सीमा से परे जाकर यह अनुशंसा की थी कि संबंधित अधिकारी को शासकीय सेवा में बने रहने का कोई अधिकार नहीं है।

23. **सरला गोयल एवं अन्य बनाम किशन चंद**[10] के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम, 1958 की धारा 27 में प्रयुक्त शब्द 'कर सकता है' की व्याख्या करते हुए निम्नलिखित अभिमत व्यक्त किया है:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> "29. दूसरे शब्दों में, अधिनियम के उद्देश्य, विधानमंडल की मंशा तथा उपर्युक्त पूर्व चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, हमारा मत है कि अधिनियम की धारा 27 में प्रयुक्त शब्द 'कर सकता है' को अज्ञापक प्रावधान के रूप में समझा जाना चाहिए, न कि निर्देशात्मक प्रावधान के रूप में। हमारे विचार में विधानमंडल द्वारा 'कर सकता है' शब्द का प्रयोग इस आशय से किया गया है कि उन प्रावधानों में दी गई प्रक्रिया का कठोरता से पालन किया जाना अनिवार्य है,

[9] (2008) 8 एससीसी 236

[10] (2009) 7 एससीसी 658

क्योंकि किरायेदार को बेदखली से विशेष संरक्षण प्रदान किया गया है। इस प्रकार की व्याख्या का सिद्धांत पूर्णतः उचित है, क्योंकि अन्यथा विधानमंडल की मंशा विफल हो जाएगी तथा मकान-मालिकों का वह वर्ग, जिनके लिए भी कुछ विशिष्ट आधारों पर किरायेदारों से कब्जा प्राप्त करने हेतु लाभकारी प्रावधान किए गए हैं, उनसे वंचित हो जाएगा।

30. मोहन सिंह एवं अन्य बनाम इंटरनेशनल एयरपोर्ट अथॉरिटी ऑफ इंडिया के प्रकरण में, इस न्यायालय ने विधानमंडल की उस मंशा पर विचार करते हुए कि 'कर सकता है' अथवा 'करेगा' शब्द का प्रयोग किस उद्देश्य से किया गया है, कंडिका 17 में निम्नानुसार अवधारित किया है: (एस.सी.सी., पृष्ठ 144–145).

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

17. किसी विधि के प्रावधान का अज्ञापक पालन किया जाना है अथवा उसका स्वरूप केवल निर्देशात्मक है, यह उस विधि में प्रयुक्त भाषा, उसके उद्देश्य, प्रयोजन तथा प्रभाव पर निर्भर करता है। "करेगा" अथवा "कर सकता है" शब्दों के प्रयोग से परिलक्षित होने वाला भेद उस शक्ति के प्रदान किए जाने की प्रकृति पर निर्भर करता है। वर्तमान संदर्भ में "कर सकता

है" शब्द का अर्थ सदैव विवेकाधीन नहीं होता। अनेक अवसरों पर किसी प्रावधान के अनुपालन को सक्षम बनाने हेतु "कर सकता है" का प्रयोग अनिवार्य अर्थ में किया जाता है। ऐसे भी प्रकरण होते हैं, जहाँ किसी व्यक्ति को, जो विधि के अंतर्गत आता है, जैसे ही कोई शक्ति सौंपी जाती है, वैसे ही उस शक्ति का प्रयोग करना उसका कर्तव्य बन जाता है। जहाँ किसी विधि की भाषा किसी कर्तव्य का सृजन करती है, वहाँ उस कर्तव्य के पालन न होने की स्थिति में विशेष उपचार का प्रावधान किया जाता है। "क्रेज़ ऑन स्टैच्यूट लॉ" (7th संस्करण) में यह कहा गया है कि सामान्यतः न्यायालय यह अवधारित करेगा कि कार्यवाही हेतु सामान्य विधि अथवा परमादेश के माध्यम से उपयुक्त उपचार लागू करने का आशय विधायिका का था। विधि का सामान्य सिद्धांत यह है कि जहाँ किसी विधि द्वारा कोई सामान्य दायित्व सृजित किया जाता है और उसके उल्लंघन के लिए विधिक उपचार प्रदान किया जाता है, वहाँ वह विधिक उपचार अनिवार्य होता है। हालाँकि, किसी विधि का क्षेत्र, उसकी भाषा तथा नीति संबंधी विचार कभी-कभी ऐसे अपवाद उत्पन्न कर सकते हैं, जिनसे यह स्पष्ट हो कि

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

विधायिका का यह आशय नहीं था कि प्रदान किया गया उपचार पूर्णतः या विशेष रूप से अनन्य हो। शब्द भाषा का बाह्य आवरण मात्र होते हैं। भाषा वह माध्यम है जिसके द्वारा किसी प्रावधान या अधिनियम के माध्यम से विधायिका की मंशा एवं उद्देश्य को अभिव्यक्त किया जाता है। अतः मंशा का निर्धारण करना आवश्यक होता है। "करेगा" शब्द का प्रयोग अपने आप में निर्णायक नहीं होता। यह निर्धारित करने के लिए कि कोई विधिक प्रावधान अनिवार्य है अथवा केवल निर्देशात्मक, उसके संदर्भ, विषय-वस्तु तथा उद्देश्य पर समुचित ध्यान दिया जाना आवश्यक है। इस विषय में कोई सार्वभौमिक विधिक सिद्धांत निर्धारित नहीं किया जा सकता कि कोई विशेष प्रावधान या अधिनियम सदैव अनिवार्य अथवा निर्देशात्मक ही माना जाएगा। यह न्यायालय का कर्तव्य है कि वह संपूर्ण अधिनियम, संबंधित धारा अथवा विचाराधीन वाक्यांश के क्षेत्र का सावधानीपूर्वक विश्लेषण कर विधायिका की वास्तविक मंशा को समझने का प्रयास करे। जैसा कि पूर्व में कहा गया है, यह प्रश्न कि कोई विधि आज्ञापक है अथवा निर्देशात्मक, मूलतः विधायिका की मंशा पर निर्भर करता है, न कि सदैव उस भाषा पर जिसमें वह

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

मंशा अभिव्यक्त की गई है। विधायिका का आशय एवं उद्देश्य ही उस अधिनियम की संरचना, रूपरेखा तथा प्रयोजन को नियंत्रित करता है, जिसे वह अधिनियम प्राप्त करना चाहता है। "सदरलैंड वैधानिक निर्माण" (3rd संस्करण), खंड–I, पृष्ठ 81, कंडिका 316 में यह प्रतिपादित किया गया है कि यद्यपि आज्ञापक एवं निर्देशात्मक विधायन के मध्य अंतर की समस्या समस्त शासकीय गतिविधियों के लिए एक जोखिमपूर्ण विषय है, तथापि यह समस्या प्रशासनिक अभिकरणों के संदर्भ में विशेष रूप से अधिक जोखिमपूर्ण हो जाती है, क्योंकि उनके द्वारा की गई कार्यवाही की वैधता उनके अस्तित्व के चार्टर अर्थात् विधि के अनुसार प्रदत्त अधिकारों के प्रयोग पर निर्भर करती है। यदि विधि के निर्देश आज्ञापक प्रकृति के हों, तो प्रशासनिक कार्यवाही की वैधता हेतु विधिक प्रावधानों का कठोर एवं पूर्ण अनुपालन आवश्यक होता है। किंतु यदि विधि की भाषा मात्र निदेशात्मक हो, तो उसके निर्देशों से किया गया विचलन प्रशासनिक कार्यवाही को अमान्य नहीं करता। इसके विपरीत, यदि विधिक निर्देश केवल वैवेकिक हों, तो वे

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

विधायी कार्यवाही एवं अधिकार-प्रत्यायोजन के लिए पर्याप्त मानक प्रदान नहीं कर सकते।

"क्रॉफ़ोर्ड ऑन द कंस्ट्रक्शन ऑफ़ स्टैच्यूट्स" के पृष्ठ 516 पर यह उल्लेख किया गया है कि—

"किसी संविधि के आज्ञापक अथवा निदेशात्मक होने का प्रश्न विधायिका की मंशा पर निर्भर करता है, न कि केवल उस भाषा पर, जिसमें वह मंशा अभिव्यक्त की गई है। विधायिका का आशय एवं उद्देश्य ही निर्णायक होते हैं, और उनका निर्धारण केवल संबंधित प्रावधान की शब्दावली से ही नहीं, अपितु उसके स्वरूप, उसके उद्देश्य तथा उसे किसी एक अथवा अन्य प्रकार से व्याख्यायित करने पर उत्पन्न होने वाले परिणामों के विचार से भी किया जाना चाहिए।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

24. इसके अतिरिक्त, भारतीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा[11] प्रकरण में निम्नानुसार निर्णय दिया गया हैः

"28. न्यायिककल्प प्राधिकारी के रूप में कार्य करने वाला जाँच अधिकारी एक स्वतंत्र निर्णायक की स्थिति में होता है। वह विभागीय/अनुशासनात्मक प्राधिकारी अथवा सरकार का

[11] (2010) 2 एससीसी 772

प्रतिनिधि नहीं होता। उसका कर्तव्य यह होता है कि वह विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों का परीक्षण करे, भले ही दोषारोपित कर्मचारी अनुपस्थित हो, ताकि यह देखा जा सके कि क्या अपरीक्षित साक्ष्य आरोपों को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं। वर्तमान मामले में उक्त प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है। चूँकि कोई मौखिक साक्ष्य परीक्षण नहीं किया गया, इसलिए दस्तावेज़ों को विधिवत् प्रमाणित नहीं किया गया और परिणामस्वरूप उन्हें इस निष्कर्ष पर पहुँचने हेतु विचार में नहीं लिया जा सकता था कि प्रतिवादियों के विरुद्ध आरोप सिद्ध हो गए हैं।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

25. इसी प्रकार, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की एक युगल पीठ ने भारत संघ अपने सचिव, **रेल मंत्रालय एवं अन्य बनाम मोहम्मद नसीम सिद्दीकी**[12] प्रकरण में विभागीय जाँच की प्रकृति के संबंध में विचार व्यक्त किया। उक्त प्रकरण में माननीय युगल पीठ के समक्ष ऐसा कोई विधिक प्रावधान इंगित नहीं किया गया था, जिसमें प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति आज्ञापक बताई गई हो। इस संदर्भ में माननीय श्री आर. वी. रवैन्द्रन (तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश) द्वारा निम्नानुसार निर्णय दिया गया—

[12] (2005) आईएलएलजे 931 एमपी

"5. रेल प्रशासन द्वारा जिस नियम 9(9)(स) का अवलंब लिया गया है, उसे सुविधा की दृष्टि से नीचे उद्धृत किया जा रहा हैः

"जहाँ अनुशासनात्मक प्राधिकारी स्वयं किसी आरोप की जाँच करता है अथवा किसी जाँच बोर्ड या अन्य जाँच प्राधिकारी की नियुक्ति करता है, वहाँ वह लिखित आदेश द्वारा किसी रेलवे कर्मचारी या अन्य शासकीय सेवक को, जिसे 'प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी' कहा जाएगा, आरोपों के समर्थन में प्रकरण प्रस्तुत करने हेतु नियुक्त कर सकता है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

याचिकाकर्ताओं का तर्क यह है कि चूँकि नियम में 'प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी नियुक्त कर सकता है' शब्दों का प्रयोग किया गया है, अतः प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति आज्ञापक नहीं है तथा यह अनुशासनात्मक प्राधिकारी के विवेक पर निर्भर करता है। उक्त नियम के सावधानीपूर्वक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि यह एक सक्षमकारी प्रावधान है, जो अनुशासनात्मक प्राधिकारी को यह विवेकाधिकार प्रदान करता है कि वह किसी रेलवे या अन्य शासकीय सेवक को अपने पक्ष में प्रकरण प्रस्तुत करने हेतु प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी नियुक्त करे। तथापि, यह

प्रावधान किसी भी स्थिति में जाँच अधिकारी को स्वयं प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी के रूप में कार्य करने, विभागीय गवाहों का मुख्य परीक्षण करने अथवा बचाव पक्ष के गवाहों का प्रतिपरीक्षण करने की अनुमति नहीं देता है।

16. उपर्युक्त सिद्धांतों का संक्षेप में इस प्रकार सार प्रस्तुत किया जा सकता है—

(i) जाँच अधिकारी, जो न्यायाधीश की स्थिति में होता है, प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की भूमिका नहीं निभा सकता, क्योंकि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी अभियोजक की स्थिति में होता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(ii) प्रत्येक एवं हर जाँच में अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति किया जाना आज्ञापक नहीं है। मात्र प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किए जाने से ही जाँच स्वतः अवैध या दोषपूर्ण नहीं हो जाती।

(iii) जाँच अधिकारी, सत्य तक पहुँचने अथवा किसी तथ्य के संबंध में स्पष्टीकरण प्राप्त करने के उद्देश्य से, अभियोजन पक्ष के गवाहों के साथ-साथ प्रतिरक्षा पक्ष के गवाहों से भी प्रश्न पूछ सकता है। तथापि, प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी के अभाव में यदि

जाँच अधिकारी अभियोजन पक्ष के गवाहों से तथ्य उजागर करने हेतु प्रश्न करता है, तो उसे तत्पश्चात दंडित कर्मचारी को उन स्पष्टीकरणों के संबंध में उक्त गवाहों से प्रतिपरीक्षा करने का अवसर अवश्य प्रदान करना चाहिए।

(iv) यदि जाँच अधिकारी अभियोजन पक्ष के गवाहों की नियमित मुख्य-परीक्षा स्वयं करता है, या अभियोजन के मामले को स्थापित करने हेतु ऐसे प्रेरक अथवा मार्गदर्शक प्रश्न पूछता है जिनमें उत्तर निहित हों, अथवा प्रतिरक्षा पक्ष के गवाहों से प्रतिपरीक्षण करता है, या विभागीय आरोपों को सिद्ध करने के उद्देश्य से सुझावात्मक प्रश्न पूछता है, तो ऐसी स्थिति में जाँच अधिकारी अभियोजक की भूमिका में कार्य करता है, जिससे जाँच प्रक्रिया दोषपूर्ण एवं अवैध हो जाती है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(v) चूँकि मात्र प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की अनुपस्थिति से जाँच स्वतः दोषपूर्ण नहीं होती और यह सिद्धांत मान्य है कि जाँच अधिकारी सत्य उद्घाटित करने हेतु किसी भी साक्ष्य से प्रश्न पूछ सकता है, अतः यह प्रश्न कि जाँच अधिकारी ने प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की भूमिका निभाई या नहीं, इस बात पर निर्भर करेगा

कि जाँच में साक्ष्य किस प्रकार प्रस्तुत किए गए तथा किस प्रकार उनका अभिलेखन किया गया।

यह तथ्य कि जाँच अधिकारी ने केवल जाँच अधिकारी के रूप में कार्य किया अथवा साथ-साथ प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की भूमिका भी निभाई, प्रत्येक प्रकरण के विशिष्ट तथ्यों एवं परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। किसी भी प्रकार के पक्षपात के आरोपों से बचने तथा जाँच को अवैध एवं दोषपूर्ण घोषित किए जाने के जोखिम से संरक्षण हेतु वर्तमान प्रवृत्ति यह प्रतीत होती है कि साधारण प्रकरणों को छोड़कर, सामान्यतः प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति की जाए। तथापि, जो भी हो, उक्त सिद्धांत लागू रहेंगे।**"**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

26. केरल उच्च न्यायालय की द्वैध पीठ ने **एम.रामा वारियर एवं अन्य बनाम कॉयर बोर्ड, एर्नाकुलम**[13] प्रकरण में निम्नलिखित टिप्पणी की:

"10. हमारे विचार में, उत्तरवादी के अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क पूर्णतः सुसंगत एवं विधिसम्मत है। उपविधि 11 की खंड (1) में प्रयुक्त शब्दावली *'जहाँ तक संभव हो'* तथा खंड 16 एवं 19 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति 'प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी, यदि कोई हो' स्पष्ट

[13] 1990 (1) एलएलजे 544

रूप से यह संकेत देती है कि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति अज्ञापक नहीं है। ऐसी स्थिति में यह नहीं कहा जा सकता कि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किए जाने मात्र से कार्यवाही दूषित हो जाएगी अथवा जाँच अवैध एवं शून्य हो जाएगी। अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह व्यापक तर्क भी प्रस्तुत किया कि किसी भी स्थिति में प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किया जाना प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है, क्योंकि इस चूक के कारण जाँच अधिकारी एक साथ न्यायाधीश एवं अभियोजक की भूमिका में आ जाता है। तथापि, प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किया जाना अपने-आप प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं माना जा सकता, जब तक यह स्थापित न कर दिया जाए कि जाँच अधिकारी पक्षपाती था अथवा उक्त नियुक्ति के अभाव में अभियुक्त को किसी प्रकार का प्रतिकूल प्रभाव हो। **वर्कमैन ऑफ बकिंघम एंड कार्नेटिक मिल्स बनाम बकिंघम एंड कार्नेटिक मिल्स, मद्रास (1970-I-LLJ-26)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय को ऐसे विभागीय जाँच की वैधता पर विचार करने का अवसर प्राप्त हुआ, जिसमें पृथक प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी नियुक्त नहीं किया गया था। उस प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

विभागीय जाँच में प्रबंधन की ओर से किसी अधिकारी द्वारा पृथक रूप से प्रतिनिधित्व नहीं किया गया था तथा श्रमिकों एवं गवाहों से प्रश्न स्वयं जाँच अधिकारी द्वारा पूछे गए थे। तथापि, न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि मात्र इस आधार पर विभागीय जाँच दूषित नहीं होती और ऐसी परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता कि जाँच अधिकारी ने अभियोजक एवं न्यायाधीश दोनों की भूमिका निभाई। वर्तमान प्रकरण में यह भी प्रदर्शित नहीं किया गया है कि अपीलकर्ता ने जाँच के दौरान कभी प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किए जाने के संबंध में कोई आपत्ति दर्ज की हो। यह भी सिद्ध नहीं किया गया कि जाँच अधिकारी को अपीलकर्ता के विरुद्ध कोई पूर्वाग्रह था अथवा प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न होने से अपीलकर्ता को किसी प्रकार की क्षति या पूर्वाग्रह हुआ हो। एक बार जब उपविधियों की व्याख्या से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति कोई आज्ञापक प्रावधान नहीं है, तो अपीलकर्ता तब तक सफल नहीं हो सकता, जब तक वह यह स्थापित न कर दे कि जाँच अधिकारी पक्षपात से ग्रसित था अथवा प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति न किए जाने के कारण उसे वास्तविक क्षति पहुँची।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

27. उपरोक्त वर्णित निर्णयों में एक समान सिद्धांत यह है कि *प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी* की नियुक्ति आज्ञापक नहीं मानी जा सकती, यदि जाँच अधिकारी स्वतंत्र, निष्पक्ष रूप से कार्य करे और विभागीय/अनुशासनात्मक प्राधिकारी अथवा सरकार के प्रतिनिधि के रूप में कार्य न करे। तथापि, वर्तमान प्रकरण में याचिकाकर्ताओं ने यह स्पष्ट रूप से इंगित किया है कि जाँच की कार्यवाही के दौरान दिनांक 19.01.1993 को प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति हेतु एक अनुरोध (अनुलग्नक अ/5) किया गया था, जिसे पूर्णतः अनदेखा कर दिया गया। इसके अतिरिक्त, जाँच अधिकारी ने प्रारंभिक जाँच प्रतिवेदन के आधार पर, उक्त प्रतिवेदन की प्रति याचिकाकर्ताओं को उपलब्ध कराए बिना ही आगे की कार्यवाही प्रारंभ कर दी, जो कि जाँच प्रतिवेदन के कंडिका 34 से स्पष्ट होता है। उक्त कंडिका में यह उल्लेख किया गया है कि प्रारंभिक जाँच में जिन गवाहों ने बयान दिए थे, उन्होंने विभागीय जाँच के दौरान अपने कथनों में बदलाव किया है। इसके अलावा, बिना कोई कारण बताए, जाँच अधिकारी ने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रारंभिक जाँच में दर्ज किए गए बयान विश्वसनीय हैं, जबकि उन्हीं गवाहों द्वारा विभागीय जाँच में, अभियुक्त कर्मचारियों की उपस्थिति में दिए गए बयान स्वीकार किए जाने योग्य नहीं हैं।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

28. प्रारंभिक जाँच के दौरान, श्री आर.के.गांधी (अ.सा./1), जिन्होंने जाँच संचालित की, ने कुछ गवाहों—अर्थात् प्यार अलीलानी (अ.सा./5), मोहनलाल गांधी (अ.सा./6) तथा सदराम सिन्हा (अ.सा./8)—का परीक्षण किया और यह अंकित किया कि जिस परिसर में वे उपस्थित थे, वहाँ जुआ खेला जा रहा था। तथापि, उक्त गवाहों ने विभागीय जाँच के दौरान यह बयान दिया कि उनसे कुछ कथनों पर हस्ताक्षर करवाए गए थे, जिन्हें उन्होंने केवल हस्ताक्षर किया था और उन्हें उनके विषयवस्तु का कोई ज्ञान नहीं था। वास्तव में, जैसा कि प्रारंभिक जाँच में उल्लेख किया गया, वैसा कोई जुए का घटनाक्रम घटित ही नहीं हुआ था। जाँच अधिकारी ने अभियोजक की भाँति कार्य करते हुए, विभागीय जाँच के दौरान दिए गए बयानों को बिना कोई ठोस कारण बताए अस्वीकार कर दिया तथा प्रारंभिक जाँच में दिए गए कथनों को स्वीकार कर लिया। एक अन्य अवसर पर, जब श्री गांधी ने अपने हस्ताक्षर एवं प्रारंभिक जाँच प्रतिवेदन की विषयवस्तु सिद्ध करने हेतु उक्त प्रतिवेदन प्रस्तुत किया, तब याचिकाकर्ताओं ने उसे देखने एवं अध्ययन करने के लिए कुछ समय दिए जाने का अनुरोध किया, किंतु उक्त प्रतिवेदन की प्रति याचिकाकर्ताओं को जाँच से पूर्व उपलब्ध नहीं कराई गई। इस प्रकार, जाँच अधिकारी ने अभियोजक की भूमिका अपनाते हुए समय देने से इनकार किया और यह कहते हुए जाँच कार्यवाही को आगे बढ़ाया कि प्रारंभिक जाँच में अभियुक्त कर्मचारियों की उपस्थिति आवश्यक नहीं है (देखें: अनुलग्नक पी/6, कंडिका 27)।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

29. विधि की यह सुव्यवस्थित एवं स्थापित सिद्धांत है कि जाँच अधिकारी को अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी के रूप में कार्य करना होता है तथा उसे प्राकृतिक न्याय के मूल सिद्धांतों का पालन करते हुए एक स्वतंत्र निर्णायक की भूमिका निभानी होती है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत यह अपेक्षा करते हैं कि अपचारी कर्मचारी को उन दस्तावेज़ों की सामग्री का खंडन करने हेतु समुचित एवं प्रभावी अवसर प्रदान किया जाए, जिनके आधार पर आरोपों का समर्थन किया जा रहा है।चूँकि प्रारंभिक जाँच प्रतिवेदन याचिकाकर्ताओं को उपलब्ध नहीं कराया गया था, अतः याचिकाकर्ताओं द्वारा उक्त प्रतिवेदन का परीक्षण करने तथा उससे संबंधित गवाहों से प्रतिपरीक्षण करने हेतु समय की माँग किया जाना पूर्णतः न्यायसंगत था, जिसे जाँच प्राधिकारी द्वारा अस्वीकार कर दिया गया। याचिकाकर्ताओं ने जाँच की कार्यवाही के दौरान दिनांक 09.01.1993 को प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति हेतु अनुरोध किया था (अनुलग्नक अ/5), तथा जाँच प्रतिवेदन के साथ जारी द्वितीय कारण-बताओ सूचना के उत्तर में भी इस संबंध में स्पष्ट एवं विशिष्ट आपत्ति उठाई थी। याचिकाकर्ताओं ने विशेष रूप से यह तर्क किया कि विधि के प्रावधानों के अनुसार प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति नहीं की गई, जिसके कारण वे अपना पक्ष प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करने की स्थिति में नहीं थे। अतः उत्तरवादी-राज्य का यह तर्क कि याचिकाकर्ताओं द्वारा कभी प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की नियुक्ति का अनुरोध नहीं किया गया तथा पक्षपात का कोई मुद्दा

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

नहीं उठाया गया, तथ्यात्मक स्थिति के प्रतिकूल है और अस्वीकार किए जाने योग्य है।

30. परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ताओं ने यह स्थापित कर दिया है कि प्रस्तुतिकर्ता अधिकारी की अनुपस्थिति में जाँच प्राधिकारी द्वारा निष्कर्ष दर्ज करने की प्रक्रिया पक्षपातपूर्ण रही है तथा उसने न्यायाधीश के साथ-साथ अभियोजक की भूमिका भी निभाई, जो कि विधि एवं प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

31. उपर्युक्त वर्णित कारणों एवं किए गए विश्लेषण के आधार पर, पुलिस अधीक्षक, राजनांदगांव द्वारा पारित आदेश दिनांक 30.09.1993 (अनुलग्नक अ/13), पुलिस उप महानिरीक्षक, रायपुर रेंज, रायपुर द्वारा पारित आदेश दिनांक 31.12.1993 (अनुलग्नक अ/16) तथा पुलिस महानिदेशक द्वारा पारित आदेश दिनांक 27.06.1994 (अनुलग्नक अ/18) को एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त, उत्तरवादी-राज्य छत्तीसगढ़ को निर्देशित किया जाता है कि वह याचिकाकर्ताओं को सेवा में पुनः बहाल करे। यह भी निर्देश दिया जाता है कि उनकी सेवा से हटाए जाने की तिथि से लेकर पुनः बहाली की तिथि तक की अवधि को सेवा की निरंतरता एवं अन्य समस्त सेवागत लाभों के प्रयोजनार्थ गणना में लिया जाएगा। तथापि, याचिकाकर्ता उक्त अवधि के लिए वेतन अथवा

पिछला वेतन प्राप्त करने के अधिकारी नहीं होंगे, क्योंकि उनका आचरण गंभीर प्रकृति का था, जो पुलिस बल में स्वीकार्य नहीं है।

32. अतः, समस्त रिट याचिकाएँ स्वीकृत की जाती हैं।

33. व्यय के संबंध में कोई आदेश पारित नहीं किया जाता।

सही/–

(सतीश के. अग्निहोत्री)

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Translated By ……Shreyas Nayak (Advocate)……..